॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु! तू कल्याण करने वाला है। तूने ऋषि-मुनियों का कल्याण किया है। विधाता! तू हमारा भी कल्याण कर। तू हमें भी यहाँ से ले चल, जहाँ एक-दूसरे की त्रुटि हो, एक-दूसरे पर क्रोध न्यौछावर किया जाता हो यह संसार मुझे नहीं चाहिए। मुझे तो वह कजली वन चाहिए जिस कजली वन में सिंह दहाड़ते हो। जहाँ हाथी ध्वनियाँ कर रहे हों। जहाँ विधाता! नाना सिंह ध्वनियाँ करते-करते उस अमूल्य आत्मा के द्वारा, वेदों का श्रवण करने वाले हों। आज के मानव से ये सिंह ऊँचे हैं जो ऋषि-मुनियों की वार्त्ता का पान करते हैं।

हे प्रभु! मेरा अङ्ग-प्रत्यंग, सर्वत्र इन्द्रियाँ यद्यमय हों। मेरे जीवन का एक-एक सङ्कल्प यज्ञमय हो। आज मैं विकल्पों में नहीं जाना चाहता, जो जीवन को नष्ट कर दें। परन्तु प्रभु! मुझे अपने सङ्कल्पों को यज्ञमय बनाने के लिए सहायता की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यजमान की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यजमान को ब्रह्मा की आवश्यकता है। इसी प्रकार आज अपने जीवन को यज्ञमय बनाने के लिए किसी की सहायता लेना चाहता हूँ। परन्तु मुझे कोई ऐसा प्रतीत नहीं देता जिसकी में सहायता लूँ, मुझे तो केवल प्रभु ही ऐसा प्रतीत देता है जिसका यह संसार यज्ञ है। मैं उस परमपिता परमात्मा को अपना स्वामी बनाना चाहता हूँ। मैं किंचित् बुद्धि वाला एक यजमान बनना चाहता हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 556 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 631
वर्ष : 47 44 समग्र वर्ष : 53

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. सङ्कल्प शक्ति	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-20
4. महाराजा अश्वपति के वृष्टि यज्ञ का वर्णन	पूज्यपाद-गुरुदेव	21-34
5. ऋषियों के उद्‌गार		35
6. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		36-42

विशेष सूचना

समिति द्वारा साहित्य को प्रकाशित कराने की गति को सुचारू रूप से निरन्तर गतिशील बनाए रखने के लिए कागज के दिन-प्रतिदिन बढ़ते हुए मूल्य एवम् प्रकाशन पर जी.एस.टी. लगने के कारण प्रकाशित साहित्य के मूल्यों में वृद्धि करना अति आवश्यक हो गया है जिसके कारण **1 जनवरी 2019 से पोथियों के मूल्य पुनः से निर्धारित किए जा रहे हैं।** अतः आप सभी से इस अमूल्य निधि को चिरकाल तक जनसाधारण में प्रकाशित व प्रसारित रखने के लिए जीवन दान की अपेक्षा वन्दनीय है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

आप सभी को नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ।

।। ओ३म् ।।

सङ्कल्प शक्ति

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। क्योंकि वो ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहने वाले हैं और वह सर्वज्ञ हैं। कोई भी संसार की वस्तु ऐसी नहीं है जहाँ वह परमपिता परमात्मा विद्यमान न हों–पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं जहाँ वह परमपिता परमात्मा न हों और समुद्रों की कोई भी तरङ्ग ऐसी नहीं है, पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं जहाँ वे परमपिता परमात्मा विद्यमान न हों, वे सर्वज्ञ हैं और वे एक-एक परमाणु में निहित रहने वाले हैं। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महती का सदैव वर्णन करते रहें और **हमारा ये कर्त्तव्य है कि हम अपनी प्रतिभा में सदैव रत्त रहें।**

विष्णु स्वरूप

आओ, मुनिवरो! आज का हमारा वेद मन्त्र उस माता वसुन्धरा की याचना कर रहा है जिस माता वसुन्धरा के गर्भस्थल में ये सर्वत्र जगत विद्यमान रहता है। ये सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो उसी की आभा में मानो रत्त रहता है। तो आओ, मुनिवरो! उस परमपिता परमात्मा की महती प्रायः उसका हम वर्णन करते रहें। आज का हमारा वेद मन्त्र मानो उस

विष्णु की याचना कर रहा है जो विष्णु हमारा कल्याण करने वाला है। हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्दों की प्रायः विवेचना की जाती है और पर्यायवाची शब्दों में विष्णु के नाना पर्यायवाची माने जाते हैं, जैसे मुनिवरो! देखो, विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का है क्योंकि वह सर्वज्ञ है और विष्णु नाम माता का है और विष्णु नाम सूर्य का है। वेद का मन्त्र कहता है कि जहाँ भी पर्यायवाची शब्द आते हैं और जहाँ भी पालना का शब्द है उसी में परिपूर्ण रहता है, उसी का नाम विष्णु पर्यायवाची शब्दों में वर्णन किया जाता है। तो आओ, मुनिवरो! देखो, आज हम उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके गुणों का सदैव हम गुणगान गाते रहें। मेरी प्यारी माता विष्णु कहलाती है क्योंकि वे पालना के मूल में विद्यमान रहती है। मेरे पुत्रों! देखो, विष्णु ब्रह्मा वर्णस्सुतम् विष्णु म देवा विष्णु जो कल्याण करने वाली जो देखो, उस माता का नाम विष्णु कहा जाता है जो मानो सतोगुण के मूल में पालना की जाती है। और रजोगुण में मानो देखो, वही एक अनुशासन कहलाता है जिसकी विवेचना बेटा! मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन की है। आज मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेष विवेचना में नहीं ले जाऊँगा **केवल ये कि हमारा जीवन देखो, विष्णु स्वरूप रहना चाहिए।** ये पालना करने वाला परमपिता परमात्मा विष्णु है जो हमारे देवत्व को धारण कर रहा है।

हृदय की आकांक्षा

आओ, मुनिवरो! देखो, मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार-विनिमय क्या कि हमारा वेद मन्त्र क्या कह रहा है। वेद मन्त्रों में बेटा! जहाँ आज का हमारा वेद मन्त्र कोई उद्गीत गा रहा है और वेद मन्त्र यह कह रहा है सम्भूति ब्रह्मणा लोकाम् वाचस्वतम् ब्रह्मा वर्णसुति—वेद का वाक् कहता है कि मानो विष्णु भी क्रियाकलाप करता है, नाना प्रकार के अनुष्ठानों में लगा रहता है। **जो**

जितना भी मानव देखो, अनुष्ठानों में लगा रहता है तो उसका एक ही मन्तव्य होता है कि मेरे जीवन में अन्धकार न आ जाएँ और उसके हृदय में एक आकाँक्षा बनी रहती है कि मैं मृत्युञ्जय बन जाऊँ। मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए, परन्तु वेद मन्त्र इस सम्बन्ध में कहता है मृत्युञ्जय ब्रह्मा वर्णसुति ब्रह्मा-वेद की आख्यायिका ये कहती है क्या अन्धकार को विचारना है कि अन्धकार है क्या? मेरे प्यारे! देखो, वेद का ऋषि इस सम्बन्ध में कहता है कि अन्धकारम् भू वर्णम् अज्ञाना सप्तप्रव्हा लोकाम्–वेद का मन्त्र कहता है कि **अज्ञान उसी को कहते हैं अन्धकार उसी को कहते हैं जहाँ अज्ञान होता है। अज्ञान उसे कहते हैं जो मानव अपनी अन्तरात्मा की वार्त्ता को स्वीकार नहीं करता, जो अपनी अन्तर्हृदय की वार्त्ता को स्वीकार करता है और अन्तर्हृदय की वार्त्ता को वो बाह्य जगत में क्रियात्मक स्वरूप देता है, मानो वही आत्मा का ज्ञान ही मेरे प्यारे प्रकाश में ले जाता है।** मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन किया है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने मानो अपनी बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं। उन्होंने बेटा! विज्ञान के वाङ्मय में प्रवेश करते हुए विज्ञान की वार्त्ताओं में जाते हुए मानव को विज्ञान की उद्बुद्धता उन्होंने प्रगट की और उन्होंने कहा है कि विज्ञान एक मानवीयत्व है।

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण है जहाँ नाना दार्शनिक विद्यमान हो करके अपनी-अपनी वार्त्ता प्रगट करते रहे। दार्शनिक ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, एक दार्शनिक भ्रमण करता हुआ एक माता मानो देखो, व्याकुल हो रही है और जब माता मानो व्याकुल हो रही है तो उस दार्शनिक ने कहा हे मातेश्वरी! तू व्याकुल क्यों हो रही है, इसके मूल में क्या है? तो मुनिवरो! देखो, माता कहती है मेरा एक पुत्र समाप्त हो गया है। मानो देखो, व्याकुल हो रही हूँ। वह दार्शनिक कहता है हे माता! मैं जानना चाहता हूँ कि मानो देखो, अमृतं ब्रव्हे व्रतम् मानो देखो, आत्मा तुम्हारा पुत्र है या शरीर तुम्हारा पुत्र है? तो उत्तर में माता निरुत्तर हो जाती है। वह यह जानती है, कि आगे वे प्रश्न करेंगे। उन्होंने कहा क्या मृतम् ब्रहे

मानो देखो, आत्मा को पुत्र कहती है तो आत्मा को तो माता जानती नहीं और यदि शरीर को पुत्र कहती है शव ज्यों का त्यों निहित रहता है। तो विचार आता रहता है दर्शनं ब्रह्मा व्रतम् देवाः—बेटा! वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है हे मातेश्वरी! अन्धकारम् भू वर्णम् मानो देखो, तुम प्रकाश के लिए गमन करो। और देखो, यह न आत्मा तेरा पुत्र है, न शरीर तेरा पुत्र है, एक सङ्कल्प मम् वृत्ति भू वर्णम् मानो ये सङ्कल्प मात्र ये जगत माना गया है। तो मेरे प्यारे! जब वेद के ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया और वह दार्शनिक अपने में ये विचार रहा है क्या ये संसार का अमृतम् क्या है जिसके ऊपर मानव इतना ग्रत हो रहा है।

कल्पवृक्ष

मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने वर्णन करते हुए कहा कि ये जो परमात्मा का जगत है ये एक प्रकार का कल्प वृक्ष है। यहाँ मानव कल्पना करता रहता है और कल्पना मात्र ही मानो देखो उसकी इच्छाएँ मानो देखो, पूर्ण होती रहती हैं। वह कल्पना की और वस्तु उसे प्राप्त हो जाती है। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि ये संसार कल्प वृक्ष है और कल्प वृक्ष क्या बेटा! देखो, एक समय ब्रह्मे ये जो यज्ञशाला है जहाँ हुत किया जाता है उसको हमारे यहाँ कल्पवृक्ष कहते हैं। क्योंकि हमारे वेद के ऋषि-मुनियों ने याग के सम्बन्ध में बड़े-बड़े उद्धृत विचार दिए हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अन्तरिक्ष में उड़ाने उड़ने लगे हैं। मुझे यहाँ वैदिक साहित्य में याग, नाना प्रकार के यागों का वर्णन होता रहा—जैसे बेटा! हमारे यहाँ देखो, अग्निष्टोम याग का वर्णन है और मुनिवरो! देखो, वाजपेयी याग का भी वर्णन आता रहता है। यज्ञोमयी विष्णु मेरे प्यारे! देखो, याग के स्वरूप में धनुर्याग है, अश्वमेध याग है, गोमेध याग है। मेरे पुत्रों! देखो, और भी नाना प्रकार के जैसे वृष्टि याग, पुत्रेष्टि याग भी कहे जाते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का बेटा! हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में वर्णन होता रहता है।

अयोध्या में पुत्रेष्टि याग

मुझे वह काल स्मरण आ रहा है जिस समय बेटा! देखो, अयोध्या में बेटा! एक पुत्रेष्टि याग हुआ था। वह याग मुझे स्मरण है। मेरे प्यारे! माता कितनी महान् और पवित्र बन सकती है। विचार आता रहता है, बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता है जब पुत्रेष्टि याग हुआ तो पुत्रेष्टि याग में मुनिवरो! देखो, राजा दशरथ और उनकी दिव्या ब्रह्मे व्रतम् उनकी देवियों को मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवर्चोसी का पठन-पाठन कराया गया और ब्रह्मवर्चोसी उसे कहते हैं जो ब्रह्म वर्चस्व ब्रव्हे ब्रह्म को वर्चस कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो, योगीजन जब उसका ध्यानावस्थित होते हैं तो वर्चस बन जाते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहा है जिस समय याग प्रारम्भ हुआ तो मेरे प्यारे! देखो, अंगिरस गोत्र में जन्म लेने वाले व्रहेतकेतु महाराज और महर्षि शृङ्गी मेरे पुत्रों! देखो, विराजमान हो करके उन्होंने याग किया। उन्होंने बेटा! याग में एक चरू बनाया और चरू बना करके एक राजा को प्रदान किया और देवियों को प्रदान किया तो बेटा! देखो, अपने में महानता की गाथा।

माता कौशल्या की दक्षिणा

जब मुनिवरो! देखो, याग सम्पन्न हो गया, सम्पन्न हो जाने के पश्चात् राजा ने देखो, पुरोहितों को, ब्रह्मवेत्ताओं को दक्षिणा प्रदान की और दक्षिणा दी और दक्षिणा देने के पश्चात् माता कौशल्या जी ने कहा कि प्रभु! मैं भी कुछ दक्षिणा परणित करना चाहती हूँ। उन्होंने कहा कि हे दिव्या! भू वर्णनं तुम क्या दक्षिणा प्रदान करोगी। उन्होंने कहा प्रभु जो आप चाहेंगे वह दक्षिणा देने के लिए तत्पर हूँ। उन्होंने कहा तो देवी हमारी इच्छा यह है क्या तुम्हारे गर्भ से ऐसे पुत्र का जन्म होना चाहिए मानो देखो, जो महान् तेजस्वी हो, राष्ट्र और समाज को उन्नत बनाने वाला हो और कुरूतियों से रमण करने वाला, ऐसा एक पुत्र चाहिए जिससे यह समाज ऊँचा बने। क्योंकि जब तक राष्ट्रवेत्ता और राजकुमार

ऊँचे नहीं होंगे तो यह राष्ट्र कदापि ऊँचा नहीं बन सकेगा और समाज भी ऊँचा नहीं बनेगा। मेरे प्यारे! उन्होंने दक्षिणा प्रदान कर दी। जब वह प्रदान की तो शृङ्गी ने कहा देवी यह सन्तान कैसे प्रकार के विचारों को विचार दे सकती है इसके मूल में क्या है? उस समय उन्होंने कहा प्रभु! जो आप मुझे शिक्षा देंगें मैं उसी के आधार पर—मानो देखो, तुम्हें यह प्रतीत है कि **मन की जो उत्पत्ति है वह अन्न के द्वारा होती है इसीलिए अन्न तुम्हारा पवित्र होना चाहिए।** देखो, मुझे स्मरण है एक समय मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में पहुँचा और अश्वपति के राष्ट्र में जा करके जब राजा ने कहा कि प्रभु आप कुछ अन्न पाईए। उन्होंने कहा कि मैं राष्ट्रीय अन्न को ग्रहण नहीं करता हूँ, मैं तपस्वी हूँ और देखो, जहाँ तपस्या का प्रसङ्ग आता है वहाँ अशुद्ध और राष्ट्रीय अन्न नहीं होना चाहिए। उन्होंने, महाराजा अश्वपति ने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा हे भगवन्! मेरे यहाँ का जो अन्न है मैं स्वयँ कला कौशल करता हूँ और स्वयँ मैं और मेरी देवी मानो देखो, कृषक अन्न को ग्रहण करते हैं जिस अन्न पर किसी का अधिकार नहीं होता उस अन्न को ग्रहण करते हैं। राष्ट्रीय प्रणाली को ऊर्ध्वा में ले जाने का प्रयास करते हैं। और मानो हमारा जो अन्न है वे कामधेनु गऊ.... हमारे यहाँ उस कामधेनु के दुग्ध का आहार करते हैं और हम राष्ट्र के क्रियाकलापों में लगे रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वह स्वीकार कर ली और स्वीकार करके उन्होंने अन्न को ग्रहण किया। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है हे देवी! यदि तुम्हें भी सुयोग्य सन्तान को जन्म देना है तो तुम्हें मानो देखो अन्न को पवित्र बनाना होगा और अन्न जब तक तुम्हारा पवित्र नहीं होगा तो मन पवित्र नहीं बनेगा और जब मन पवित्र नहीं बनेगा तो तुम मानो देखो क्रियाकलापों में अपने में अशुद्ध रह जाओगी और ज्ञान, विज्ञान, विवेक उत्पन्न नहीं होगा। मेरे प्यारे! कौशल्या ने कहा प्रभु! जैसे आपकी आज्ञा है मैं वैसा ही कर पाऊँगी। क्योंकि जब मैं बाल्यकाल में अपने पूज्य गुरुदेव तत्त्व

मुनि के द्वारा अध्ययन करती थी तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह निर्णय कराया क्या यदि तुम गृह आश्रम में प्रवेश करोगी तो गृह आश्रम में जाने से पूर्व तुम्हारा मन पवित्र होना चाहिए। क्योंकि रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण ये तीन गुण मानव के कहलाते हैं। परन्तु माता सबसे प्रथम तमोगुण में जाती है, तमोगुण में उत्पत्ति का मूल रहता है। और जब रजोगुण में जाती है तो वहाँ अनुशासन रहता है क्योंकि अपने पर तुम्हारा अनुशासन होना चाहिए और तुम्हारा अन्न के द्वारा भी अनुशासन होना चाहिए उसके पश्चात् सतोगुण आता है। माता लोरियों का पान कराती रहती है लोरियों के पूर्व विचारों में दर्शनों का अध्ययन करती है। जब वह दर्शनों का अध्ययन करती हुई जब आत्मा की चर्चाओं में रत्त हो जाओ आत्मां भू वर्णनं ब्रह्मे कृतम् हे आत्मा! तू मानो मेरे गर्भ में प्रवेश करती रहती है, हे आत्मा! तू कौन कहाँ से तेरा आगमन हुआ है जो इस प्रकार माता के भव्य विचार होते हैं तो माता अपने उदर में रहने वाले बाल्य की रक्षा कर रही है, उसे ओजस विचार दे रही है। मेरे प्यारे! देखो, जब माता कौशल्या ने यह उपदेश ऋषि का जब पान कर लिया तो वह अपने में मानो याग सम्पन्न हो गया। दक्षिणा इत्यादि दे करके याग की प्रतिभा महान् बन गई।

महाराजा दशरथ का आग्रह

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है माता कौशल्या देखो, स्वयँ कला कौशल करती और स्वयँ कला कौशल करके उसके बदले जो अन्न आता उसको ग्रहण करती। मेरे प्यारे! देखो, राजा को यह प्रतीत हुआ, क्या तुम्हारी राजलक्ष्मी अन्न ग्रहण नहीं कर रही हैं। वे बेटा! देखो, ये वाक् जब उन्होंने श्रवण किया तो अमृतमं ब्रव्हे तो राजा एक समय गृह में प्रवेश हुए और गृहणी से कहा हे देवी! तुम अन्न ग्रहण नहीं कर रही हो? मेरे प्यारे! माता कौशल्या ने कहा प्रभु मैं ऋषियों को वचन दे चुकी हूँ क्या मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी। उन्होंने कहा क्यों नहीं

करोगी? क्या राष्ट्र का जो अन्न होता है वह रजोगुण व तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है और रजोगुणी और तमोगुणी जो अन्न है उसको मैं ग्रहण करना नहीं चाहती। मैं अपने में स्वयँ कला कौशल कर लेती हूँ। राजा ने कहा देवी हमारा जो अन्न है वह इस प्रकार का नहीं है। उन्होंने कहा तो प्रभु! मैं उसको ग्रहण कर ही नहीं सकती क्योंकि मैं ये दक्षिणा प्रदान कर चुकी हूँ। यज्ञशाला के मध्य में विद्यमान हो करके, मेरे प्यारे! देखो, जब राजा ने बहुत कुछ उद्गीत गाया परन्तु देवी ने स्वीकार नहीं किया। अन्त में राजा देखो, अपने कक्ष में चले गए।

देखो, विचारने लगे कि राजलक्ष्मी को तो अन्न तो ग्रहण करना ही चाहिए। मैं कहाँ कैसे मानो देखो सबृत्तियों को ला सकता हूँ। चलो, वशिष्ठ मुनि हैं, माता अरुन्धती हैं, दोनो महान् हैं। ये उनके विचारों को स्वीकार अवश्य कर पाएँगें। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से सायँ काल के समय अपने वाहन में विद्यमान हो करके राजा गमन करते हैं।

माता अरुन्धती और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराजा का जीवन

भ्रमण करते हुए वह भयङ्कर वन में पहुँचे जहाँ उनका विद्यालय है। राजा देखो, अमृतम् राजा जब वशिष्ठ मुनि के यहाँ पहुँचे तो चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त था। मुनिवरो! देखो, माता अरुन्धती बोली कि हे प्रभु! ये चन्द्रमा तो अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त है प्रभु! ये हमारा कैसा सौभाग्य है। आज चन्द्रमा का दिवस है इसमें कुछ वार्त्ताएँ होनी चाहिए। उन्होंने कहा देवी तुम प्रश्न करो मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर अवश्य दूँगा। उन्होंने कहा प्रभु ये चन्द्रमा ये क्या है? उन्होंने कहा ये जो चन्द्रमा है यह षोडश कलाओं से युक्त है। आज मानो पूर्णिमा का दिवस है जितनी कलाएँ हैं वह षोडश कला हैं चन्द्रमा भी उन्हीं में ये रत्त रहने वाला है। ये मानो समुद्रों से सोम लेता है। समुद्रों से सोम ले करके और ये मानो रात्रि मानो उसको अमृत बना करके कृषि में प्रदान कर देता है। माता के गर्भस्थल में जो जरायुज होता है उसमें

भी अमृत देने लगता है। माता के निचले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है उस नाड़ी में ये प्रकाश जा रहा है। उस नाड़ी का समन्वय पुरातत नाम की नाड़ी से होता है और पुरातत नाम की नाड़ी का जो समन्वय है वह माता की लोरियों से होता है वहाँ से पञ्चम नाड़ी बन करके वह गमन करती है। माता की नाभि से नाड़ी का समन्वय हो करके मेरे प्यारे! देखो, वह जरायुज में हम जैसे शिशु माता के गर्भ में वहाँ प्रवेश हो रहा है, वह अमृत को प्रदान किया जा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णनं ब्रहे देवी ने कहा धन्य है प्रभु! मेरे प्यारे! उन्होंने कहा प्रभु! ये अरुन्धती मण्डल क्या है? उन्होंने कहा ये जो अरुन्धती मण्डल है, ये अरुन्धती मण्डल है परन्तु उसमें पार्थिव तत्त्व प्रधान रहता है और इसका समन्वय मानव की बुद्धि से रहता है। मानो ब्रह्मे कृतम् और वशिष्ठ मण्डलाम् मेरे प्यारे! उसके साथ ही वशिष्ठ मण्डल कहलाता है। ये जो वशिष्ठ मण्डल है ये मण्डलों में वशिष्ठ कहलाता है जैसे प्राणियों में देखो, राजा वशिष्ठ होता है। जैसे मुनिवरो! देखो, विद्यालय में आचार्य वशिष्ठ होते हैं इसी प्रकार देखो, लोक-लोकान्तरों में एक वशिष्ठ मण्डल भी मानो अपने में वशिष्ठ कहलाता है। मेरे पुत्रों! लोक-लोकान्तरों की चर्चा हो रही थी। उन्होंने कहा माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे पुत्र होते हैं तो हे देवी! अरुन्धती और वशिष्ठ की दोनों की छाया आती है और छाया वह मानो देखो, ब्रह्मरन्ध्र से इसका समन्वय रहता है और वह जो ब्रह्मरन्ध्र से बुद्धि की उत्सुकता होती है, बुद्धि को जन्म दिया जाता है। हमारे इस मानव शरीर में बुद्धि के बेटा! अनन्य पर्यायवाची माने गए हैं। जैसे बुद्धि है, मेधा है, ऋतम्भरा है और प्रज्ञावी कहलाती है। मानो देखो, इसी को हमारे यहाँ रेणुका कहा जाता है, उसी को गो कहा जाता है, उसी को निध्यासी कहा जाता है। तो बुद्धि के नाना प्रकार माने गए हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, बुद्धियां भू वर्णनं लोकाम् तो लोक-लोकान्तरों की मण्डलों की माला आती रहती है।

मेरे प्यारे! देखो, जब माता अरुन्धती यह वार्त्ता प्रगट कर रही थी उन्होंने कहा प्रभु! ये जो स्वाति नक्षत्र है, मूल नक्षत्र है, इसका मानव के जीवन में क्या समन्वय रहता है? उन्होंने कहा कि हे देवी! ये जो स्वाति है और देखो, मूल नक्षत्र दोनों की छाया मानो देखो, रेणवृत्तिका एक मण्डल होता है प्रवेश करती हुई ये माता के हृदय और हृदय से समन्वय होता है और मानव के मस्तिष्क से समन्वय हो करके मेरे प्यारे! देखो, ये बुद्धि ब्रहाणी कहा जाता है। अब्रहाणी व्रत्तम् ब्रह्मे तम् देवा उन्होंने कहा यही तो मङ्गल है जो अपने को अपनेपन में पान करा रहा है। ये बुद्धि का सूचक है और ब्रह्मरन्ध्र में मानो देखो, इनका समन्वय रहता है। बेटा! वेद मन्त्र कहता है ब्रह्माण्डाम् भू तम् देवत्वा ये जो ब्रह्माण्ड है इसकी आभा जब हम प्रगट करने लगते हैं तो बेटा! लोक-लोकान्तर बेटा! हमारे जीवन के सहायक बना करते हैं और विज्ञानवेत्ता भी, इसीलिए परम्परागतों से बेटा! विज्ञान की आभा में सदैव रत्त रहे हैं। तो ये विचार-विनिमय हो रहा था। विचार-विनिमय करते-करते बेटा! उनका रात्रि काल समाप्त हो गया। देखो, माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज बेटा! अपने में महान् हैं क्योंकि पति पत्नी वह ही महान् कहलाते हैं जो बेटा! देखो, वह रात्रि के काल में या साँयकाल को आत्मा परमात्मा या विज्ञान की चर्चा करते हैं। क्योंकि उनके गृह में रहने वाला जो बाल्य बालिका हैं ये उनके वाक्यों को श्रवण करके बेटा! गर्हपत्य नाम की अग्नि को जागरूक करते हैं। हमारी अग्नियों का जहाँ वर्णन आता है—नाना प्रकार की अग्नियाँ कहलाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, गार्हपत्य, गर्हपत्य और वैश्वानर और मुनिवरो! आह्वनीय नाम की अग्नि का वर्णन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है इसीलिए अग्नि का चयन करने वाले विचारों की अग्नि में बेटा! जब तल्लीन हो जाते हैं तो विचारों की अग्नि से बेटा! गृह पवित्र बनते हैं और वह कौन-सी अग्नि वह ज्ञान रूपी अग्नि है, वह दर्शनों की विचारधारा है जिसको देखो, वह गर्हपत्य नाम की अग्नि कहते हैं, बाल्य बालिका उसी से ऊँचे बनते हैं।

तो आज बेटा! मैं दूरी नहीं जाना चाहता हूँ विचारों को उद्गीत रूप में गाने के लिए कि माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों अपने में विचार-विनिमय करते बेटा! प्रातःकाल हो गया। प्रातःकाल हो गया तो दोनों अपने आसन से निवृत्त हो करके मानम् ब्रह्मणे मानो देखो, अपने क्रियाकलापों से निवृत्त हुए और राजा ने उनके दर्शनार्थ किया।

राजा की इच्छा

ऋषि ने कहा कि हे भगवन्! तुम किस समय पधारे? उन्होंने कहा प्रभु! मैं सायँ काल आ गया था उस समय तुम्हारा विचार-विनिमय हो रहा था और उन विचारों को श्रवण करता हुआ मेरा अन्तरात्मा गदगद हो गया भगवन्! हे प्रभु! मैं अमृतम् ब्रहे राजा ने जब ऐसा कहा तो माता अरुन्धती और वशिष्ठ बोले क्या तुम्हारा आगमन क्यों हुआ बिना सूचना के? उन्होंने कहा प्रभु! मेरी जो दिव्या है, मानो देखो, कौशल्या जी वो राष्ट्र का अन्न नहीं ग्रहण नहीं करती हैं और मेरी इच्छा यह है कि देवी राष्ट्र का अन्न ग्रहण करने लगे तो मानो देखो, मेरा राष्ट्र जो सतो है। उन्होंने कहा हम प्रयत्न करेंगें। माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके और वह मानो देखो, याग से निवृत्त हो गए। राजा के वाहन में विद्यमान हो करके बेटा! वह अयोध्या के लिए पधारे।

वशिष्ठ मुनि और माता अरुन्धती की कर्त्तव्य पारायणता

भ्रमण करते हुए दोनों अयोध्या में आए। ब्रह्मणे कृतम माता अरुन्धती और वशिष्ठ दोनों कौशल्या जी के कक्ष में जा पहुँचे। माता कौशल्या ने आसन दिया और वह आसन पर विद्यमान हो गए। जब आसन पर विद्यमान हो गए तो उन्होंने कहा कहो भगवन्! आज बिना सूचना के तुम्हारे आने का कारण क्या है? उन्होंने कहा ब्रह्मणे कृतम देवाः आत्माम् ब्रव्हे। मेरे प्यारे! उनका अतिथि किया और अतिथि सेवा

करने से उन्होंने कहा कहो भगवन्! अब मुझे वर्णन कराइए। आपका आगमन्, आपकी कोई सूचना मुझे प्राप्त नहीं है क्या अब आपका आगमन हो रहा है, परन्तु देखो, मैं भगवन्! आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले क्या हे देवी! हम इसीलिए तुम्हारे कक्ष में आ पहुँचें कि तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगीं क्योंकि राष्ट्र का अन्न जो होता है वह रजोगुण व तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है, इसीलिए मेरा मन उससे तृप्त नहीं हो सकेगा। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि **संसार में जितने भी शुभ क्रियाकलाप हैं मानो देखो, वह अपने मन से शुभ क्रियाओं में रत्त होते हैं।** इसीलिए प्रभु! मैं इसको स्वीकार नहीं कर पाऊँगी। उन्होंने कहा कि हे देवी! हममे तो अमृताम् भू वर्णनं हमारा जो आगमन है उसका एक मूल है ये। तो राजा ने तो बेटा! वहाँ से प्रस्थान किया और माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि दोनों विचार-विनिमय करने लगे। उन्होंने कहा देवी! तुम अन्न ग्रहण करो। उन्होंने कहा प्रभु! मैं ग्रहण नहीं करूँगी क्योंकि मैंने ऋषि की यज्ञशाला में मैंने एक प्रतिज्ञा की है और मैं प्रतिज्ञा में उसमें बद्ध होने और यह प्रतिज्ञा की है कि मैं देखो, शुद्ध सन्तान को जन्म देने से पूर्व मेरा अन्न पवित्र हो। मेरा मन पवित्र हो और मन को पवित्र होने से ही मानो देखो उसकी तरङ्गे मस्तिष्क में होती रहेंगी, मस्तिष्क का पवित्र निर्माण होगा। हे प्रभु! मैं इसीलिए राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी। उन्होंने कहा देवम् ब्रह्मा व्रतम् उन्होंने कहा देवी! तुम्हें ग्रहण तो करना ही चाहिए। माता अरुन्धती ने जब ऐसा कहा तो देवी बोली; कौशल्या जी ने कहा प्रभु! मैंने शृङ्गी जी के द्वारा यह प्रतिज्ञा की है क्या मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी। हे प्रभु! मैंने यह सङ्कल्प किया है और ये जो परमात्मा का जगत है ये सङ्कल्प मात्र कहलाता है। मानो देखो, नाना प्रकार के तारा मण्डल है वो तारा मण्डल एक-दूसरे से कटिबद्ध हो रहे हैं। वे सङ्कल्प मात्र से मानो देखो, ब्रह्म सूत्र से पिरोए हुए हैं, और ब्रह्म

सूत्र में पिरोने से ये ब्रह्माण्ड अपनी आभा में मानो नृत्त कर रहा है और सङ्कल्पमयी कहलाता है। तो प्रभु! मैंने भी ये सङ्कल्प किया है, मैं अपने सङ्कल्प को नष्ट नहीं कर सकूँगीं। मेरे प्यारे! देखो, माता अरुन्धती और वशिष्ठ दोनों मौन हो गए। मेरे प्यारे! देखो, कुछ समय मौन रहने के पश्चात् माता अरुन्धती और वशिष्ठ ने कहा देवी! हमारा तो आगमन यही है कि हम हमारी यह प्रार्थना है क्या तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण अवश्य करो। कौशल्या जी ने कहा प्रभु! हे पूज्यपाद! मैं कदापि भी अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी क्योंकि मैंने बाल्यकाल में महर्षि तत्त्व मुनि के द्वारा ये प्रतिज्ञा बद्ध हुई क्या मैं देखो, इस राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी अब मैं अपने गर्भ से एक महान् पवित्र सन्तान को जन्म देना चाहती हूँ और मानो यदि मेरे अन्तर्हृदय में देखो, दाह बन गया तो वही संस्कार बाल्य में प्रवेश हो जाएँगें। यदि प्रभु! मैं क्रोध की आभा को लाई तो मानो देखो, वही तरङ्गों का जन्म होगा। हे प्रभु! मानो यदि मैं तमोगुण के अन्न को ग्रहण करूँगी तो वह बाल्य उसी तरङ्गों से वह बाल्य मेरे गर्भ में तरङ्गित होता रहेगा। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि अपने में निरुत्तर तो हो गया परन्तु देखो, राजा के विचारों का पालन कर रहे थे। माता अरुन्धती कहती है कि हे देवी! तुम्हें अन्न अवश्य ग्रहण करना चाहिए। उन्होंने कहा हे मातेश्वरी! मुझे विशेष बाध्य न करो क्योंकि मैं ये प्रतिष्ठित हूँ और इस प्रतिज्ञा को मैं नष्ट नहीं करूँगी। यदि मेरे हृदय से ऋषि का वाक् समाप्त हो गया तो मेरा हृदय मानो अशुद्ध हो जाएगा मेरे कर्मणा ब्रह्मणे देवत्वाम् हे मातेश्वरी! तुम महान् हो तुम बाल्यों को शिक्षा देती हो, तुम मानो देखो, अपने में अपनेपन को धारण करती हो।

सङ्कल्प

मुझे वह काल स्मरण है जब तुम देखो, महाराजा विश्वामित्र जब अश्वमेधाम् भू वर्णनम् जब अश्वमेध का अध्ययन कर रहे थे तुमने उनको शिक्षा प्रदान की। देखो, विश्वामित्र जैसे महापुरुषों को तुम शिक्षा देने

वाली हो। मेरे प्यारे! देखो, वह निरूत्तर हो गई। विचार यह ऋषि ने कहा देवी! तुम्हें अन्न ग्रहण अवश्य करना चाहिए। उन्होंने कहा प्रभु! यह परमात्मा का अमूल्य जगत है और यह सङ्कल्पमात्र ही चल रहा है और यह सङ्कल्प में मानो देखो, सूर्य है अपनी आभा में प्रकाश दे रहा है। चन्द्रमा को मानो सहायता दे करके चन्द्रमा अपनी कलाओं से सम्पन्न होता है। मानो वही सूर्य है जो विष्णु कहलाता है और विष्णु बन करके वह प्रकाश देता है, वही प्रकाशमयी बनाता रहता है। तो हे देवतम्! देखो, जब विष्णु अमृत कहलाता है तो प्रभु अब्रहे! असुताः है वर्ण ब्रव्हे कृतम् देवाः अभ्यम् ब्रह्मा अभ्यम् रूद्रो भागा प्रव्हा तम् देवम् विष्णु हे मातेश्वरी! हे ऋषिवर! मैं अपने में कटिबद्ध हूँ। सङ्कल्प में जैसे सूर्य नाना रश्मियों को धारण करता रहता है। ये भी तो प्रभु का सङ्कल्प है क्या तीस लाख पृथ्वियों को यह अपने में धारण किए रहता है और यह मानो देखो, उसकी माला बना करके ही अपने में मानो देखो, मालामयी कहलाता है। इसी प्रकार हे मातेश्वरी! हे पितर! मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि मैं उस माला को अपने में धारण किए हुए हूँ। वह मेरी माला जो है वह प्रतिज्ञाबद्ध है मानो सूत्र में पिरोई हुई है। नाना प्रकार के मनके ही तो माला वह सूत्र बन करके ही मानो देखो, माला के रूप में हमें दृष्टिपात आते रहते हैं। तो इसीलिए मैं तुम्हारे वाक्यों को स्वीकार नहीं कर सकूँगीं मैं यह प्रतिज्ञा बद्ध हूँ। जब पुनः ऋषि ने कहा तो उन्होंने कहा हाँ माताम् सम्ब्रहे हे ऋषिवर! मैं एक समय प्रतिज्ञा को नष्ट कर सकती हूँ। यदि आप दोनों देखो, तुम्हारा दोनों का संस्कार हुआ है और यह माता अरुन्धती और वशिष्ठ हैं ये तो सङ्कल्पबद्ध हैं, मानो पति पत्नी दोनों एक-दूसरे में सङ्कल्पबद्ध रहते हैं। इसी प्रकार राजा और प्रजा अपने में कटिबद्ध रहते हैं, गुरु और शिष्य दोनों एक स्थली पर विद्यमान हो करके विद्या का अध्ययन करते हैं। सङ्कल्प मात्र से इसी प्रकार देखो, ये जो जगत है मानो पृथ्वी अपने में गुरुत्व को लिए हुए है, अपने में तत्प्रहा अपने में ही ओत प्रोत हो रही है। इसीलिए मैं मानो देखो, अपने सङ्कल्प

को जब नष्ट कर सकती हूँ क्या जब तुम दोनों एक-दूसरे में पति और पत्नीत्व के भाव को त्याग दो। तुम दोनों अपने सङ्कल्पों को नष्ट कर सकोगे तो मैं भी अपने सङ्कल्प को नष्ट कर सकती हूँ अन्यथा यह नहीं हो सकेगा।

मेरे प्यारे! देखो, माता अरुन्धती और वशिष्ठ दोनों मौन हो गए और दोनों शान्त हो करके बोले ब्रह्मणे कृतम् ब्रह्मणे वेदाम् उन्होंने कहा देवी! तुमने जान लिया ये तो वही वेद का मन्त्र है जो मैं अभी-अभी वेद मन्त्र का उद्गीत गा रहा था और वह वेद का मन्त्र यह कहता है कि जो **मानव सङ्कल्प कर लेता है उसे सङ्कल्प नष्ट होना ऐसा है जैसे मानो देखो प्रलय काल आ जाता है।** प्रलय काल को तुम भी शान्त करो और मानो देखो, उन्होंने, दोनों ने एक अवृत्ति हो करके दोनों ने कहा धन्य है तुम्हें देवी! क्या तुमने जो सङ्कल्प किया है ये बड़ा महान् है, पवित्र है। माता का सङ्कल्प ही गृह को ऊँचा बनाता है। माता का सङ्कल्प ही मानो देखो, यहाँ पुत्रो को महान् बना देता है और जो गर्हपत्य नाम की अग्नि में परणित हो जाता है। मेरे प्यारे! ये उद्गीत गाते हुए और वहाँ से उन्होंने प्रस्थान किया, उन्हें नाना प्रकार का आशीष दे करके दोनों वहाँ से गमन करके मानो देखो, राजा की राजस्थली पर पहुँचें। उन्होंने आसन को त्याग दिया। राजा ने कहा कहो भगवन् उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्मणा वर्णस्सुतप्प्रव्हा वेद का वाक् ये कहता है कि किसी के सङ्कल्प को नष्ट मत करो। ये सर्वत्र जगत् ही सङ्कल्प है जैसे मानो देखो, एक शब्द है और एक शब्द में मानो देखो दूसरे शब्द को मिलान कर दिया जाता है और तीसरे को मिलान करके मानो देखो, वह शब्द बन जाता है, वह ध्वनि बन जाती है। उसी शब्द को ले करके जब साधक देखो, अपनी अनहद् ध्वनि में जब श्रवण करता है तो वह एक ध्वनि बन करके मेरे प्यारे! मानो देखो, आत्मा की ध्वनि बन जाती है और आत्मा की जो ध्वनि उत्पन्न होती है तरङ्गों के रूप में–वही मेरे प्यारे! देखो, उसी से मन, उसी से प्राणत्व दोनों का मिलान हो करके बेटा! एक विचार उत्पन्न

होता है और वही विचार मेरे प्यारे! मानो देखो, मानव को पवित्र बना देता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्यता नहीं हूँ केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ क्या मानव को मानो देखो, अपने में कितना सुदृढ़ रहना चाहिए। और **मानवीयत्व अपने में सदैव मानवता की आभा में सदैव रत्त रहता है।** आओ, मेरे प्यारे! मैं देखो, तुम्हें त्रेता के काल में ले गया। आज मैं उस काल में ले गया जहाँ **मेरी प्यारी माता अपने में माताओं के भव्य गुणों को अपने में धारण करती रही है और ओजस बन करके गृह और देखो, समाज को उन्नत बनाने में मानव की बड़ी सहायता करती है, अपने में महानता को प्राप्त होती रहती है।**

यह है बेटा! आज का वाक्। **आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः ये कि हमें परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा को जान कर परमात्मा को सर्वत्र स्वीकार करते हुए**– यहाँ कोई स्थली ऐसी नहीं जहाँ परमपिता परमात्मा न हों। **माता को हृदय ग्राही बनाने वाला वह परमपिता परमात्मा है।** इसीलिए यह बेटा! आज का वाक्, अब यह सम्पन्न होने जा रहा है। कल मुझे समय मिलेगा, तो बेटा! शेष चर्चाएँ कल प्रगट करेंगें।

दिनाँक :
समय : } अनुपलब्ध
स्थान :

।। ओ३म् ।।

महाराजा अश्वपति के वृष्टि-यज्ञ का वर्णन

देखो मुनिवरो! मुझे स्मरण है कि महाराज अश्वपति के यहाँ यज्ञ हो रहा था। महर्षि चाकराणी उस यज्ञ में उद्गाता बनने वाले थे क्योंकि व ष्टि यज्ञ का आयोजन था। महाराज अश्वपति मनु महाराज के गौत्र में उत्पन्न हुए थे। मनु परम्परा में भी लगभग कोई एक सहस्त्र प्रणाली में राज्य करते थे। उनके यहाँ से यह निमन्त्रण आया कि यज्ञ में चलना है। उस समय मेरी कन्या की अवस्था केवल पाँच वर्ष की थी। ब्रह्मवेता बनने के लिए तत्पर हो ही गई थीहृदय में यह वेदना जाग त हुई कि हे पुत्री! तुम्हारी क्या इच्छा है? क्या तुम यहाँ आनन्द से रहना चाहती हो या यज्ञ में प्रविष्ट होना चाहती हो? उसने कहा कि प्रभु! **''यत्रम् भगा प्रथम मम वेचः यशवानि ग्रंथनमम् वेचु न यज्ञं भगा वस्तु तमामी अस्वते। यज्ञ भगानम मधु कन्छनम् मेद्यो न देवं ब्रह्मणे गरु अश्चताः।''** हे गुरु! यह आपको प्रतीत है कि यह जो यज्ञ है यह तो महापुरुष है, क्या मैं महापुरुष की शरण में नहीं जाना चाहती हूँ? यह कैसे हो सकता है? आपको यह प्रतीत होगा कि महाराज दिग्ध ने याज्ञवल्क्य की सभा में क्या कहा था? महाराजा जन्मदग्नि ने महाराजा कोडंग ऋषि के यहाँ क्या कहा था?

यह भी आपको प्रतीत हो गया होगा कि गार्गी ने यज्ञ के सम्बन्ध में क्या कहा है? महर्षि भारद्वाज ने तो यहाँ तक कहा है कि यज्ञ ही मानव का जीवन है, यज्ञ ही मानव की प्रतिभा है, यज्ञ ही मानव के जीवन का एक सार कहा जाता है। क्या मैं यज्ञ मैं प्रविष्ट नहीं होना चाहती? यह कैसे हो सकता है यह मैं कैसे उच्चारण कर सकती हूँ? यज्ञ तो सबसे उत्तम पुरुष है?

जिस समय ऋषि–मुनियों का यह प्रश्न चला, जमदग्नि ने जिस समय अर्द्ध–भागा अस्तिति ऋषि से यह कहा था कि हे महाराज, देवता कितने हैं तो उन्होंने देवताओं की गणना कराते हुए तीन हजार तीन सौ छः देवताओं की गणना कराई थी। उस समय फिर प्रश्न किया गया कि देवता कितने हैं तो उन्होंने कहा कि देवता पैंतीस हैं। उन्होंने फिर प्रश्न किया कि देवता कितने

हैं तो उन्होंने कहा कि देवता छः हैं। उन्होंने फिर प्रश्न किया कि देवता कितने हैं तो उन्होंने कहा, तीन हैं। उन्होंने फिर प्रश्न किया कि देवता कितने हैं तो उन्होंने कहा, दो हैं। उन्होंने फिर प्रश्न किया कि देवता कितने हैं। तो उन्होंने कहा कि केवल एक देवता है। उन्होंने कहा कि यह जो यज्ञ है यही सबका सर्वोप्रथम देवता है। यही संसार में एक देवता है क्योंकि यह जो भी कुछ हो रहा है, हमारी आपकी विचारधारा चल रही है यह भी यज्ञ है। हम जो कर्म करते हैं यह भी सब यज्ञ है।

यज्ञ का देवता कौन है यज्ञ का देवता अश्वपति कहलाया गया है और मैं उद्गाता बनना चाहता हूँ, उद्गाता का देवता अग्नि है। उन्होंने कहा कि अग्नि का देवता उसका द्यौ है। उन्होंने कहा कि द्यौ का देवता कौन है? द्यौ का देवता अन्तरिक्ष है। अन्तरिक्ष का देवता कौन है? गन्धर्व लोक है। गन्धर्व लोक का देवता कौन है? गन्धर्व लोक का देवता चन्द्र लोक है। चन्द्र लोक का देवता कौन है? चन्द्र लोक का देवता इन्द्र लोक है। इन्द्र लोक का देवता कौन है? इन्द्र लोक का देवता प्रजापति है। प्रजापति का देवता कौन है? प्रजापति का देवता यज्ञ कहलाया गया है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! जब यह वाक्य मस्तिष्क में आते रहे तो चाकरायण से पुनः प्रश्न किया कि हे अत्रि गौत्राय! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो तुम्हारा यज्ञमयी पुरुष है मानो हृदय की यह उद्गमता तुम्हें क्या कह रही है? उस समय कहा कि **समभेवतानी समभगावतस्म्।** हे ऋषि कन्या! में यही तो जानने आया हूँ कि यज्ञ में मुझे क्या प्राप्त होता है। मैंने तो यह जाना है कि तुमने यह वाक्य अशुद्ध कहा है। उन्होंने कहा कि मैंने इसलिए कहा है कि मैं यह वाक्य उच्चारण न करती तो आपका मुझको निर्णय नहीं हो सकता था। आप उद्गाता बन जाइए। उन्होंने कहा कि यज्ञमान से प्रश्न करूँ। उन्होंने कहा। यज्ञमान से प्रश्न न कीजिए, क्योंकि तुम्हारा जो उत्तर है उद्गाता बनने के लिए, वह उद्गाता बनाने के लिए यथार्थ है क्योंकि तुम उद्गाता के देवता को जानते हो। परन्तु मैं तुम्हारे से एक वाक्य और जानना चाहुँगी कि तुम उद्गाता हो, कौन से उद्गम विचारों से आहुति दोगे? उन्होंने कहा, पुत्री! मैं तीन विचारों से दूँगा। तीन ही विचार मेरे समीप रहते हैं। तीन ही प्रकार की अहुतियाँ होती हैं संसार में, यज्ञशाला में जो आहुतियाँ

देता है वह तीन प्रकार की होती हैं। मानो एक राष्ट्रीय आहुति होती है, एक ब्रह्म आहुति होती है और एक मानव आहुति होती है। तीन आहुति होती हैं। मैं तीनों आहुतियों से यज्ञ करा सकूँगा, उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय आहुति कैसी होती है, मानवीय आहुति कैसी होती है और देव आहुति कैसी होती है? उन्होंने कहा–

देवम् समाप्रधम् ब्रह्मे अस्वाति लोकां चंचनम् वोकम् ब्रह्मे अस्वते!

जो ब्रह्म लोक में जाने वाली आहुति है जिससे हम ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं मानो देखो परा विद्या से और दूसरी विचारधारा **''राष्ट्रम् चटायम् चटच्यप्रभे अस्वति नामाः यज्ञम् भेवता''** मानो जो यज्ञ में आहुति देने के पश्चात चटाचट होता है। चटाचट का अभिप्राय यह है कि मानव का जो शरीर है वह यज्ञ है। इस यज्ञ में जब राष्ट्रीय क्रान्ति आती है तो उसके हृदय में चटाचट होती है। जैसे अग्नि में दी हुई आहुति चटाचट को प्राप्त होती है, इसी प्रकार मेरा जो यह शरीर है, यज्ञ है, इसमें जितनी भी चटाचट क्रान्ति होगी मेरे मस्तिष्क में, उतना राष्ट्र पवित्र होगा, उतनी राष्ट्रीय क्रान्ति मानवत्व के लिए पवित्र होगी।

''यचयतानम् माम वेताम् ब्रह्मे अस्वति धारा मम वेचाः'' तृतीय आहुति है जो मनुष्यों में प्रतिष्ठित होती है। इसलिए मैं तीन विचारों से आहुति देना चाहता हूँ। ऋषि कन्या ने कहा कि यथार्थ है यह वाक्य। तुम उद्गाता बन जाओ।

''सम गतानम् मम वेचाः सम भवति मम् वेचिक तम् ममा अस्वेति भागाम् ब्रह्मे यचतानम् मेधवा च प्रधेः?'' उस समय अश्वपति ने कहा। हे ऋषि कन्या! मैं भी चाकरायण से कुछ प्रश्न करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा कि कीजिये भगवन्! तब वह **आक्रति कन्याम् ब्रह्मे अस्तानम् मेघा प्रभे अस्ति।** अब देखो मुनिवरो, महाराजा अश्वपति ने यज्ञ का चुनाव किया तो चाकरायण से कुछ प्रश्न किया गया। उन्होंने कहा कि यह जो तुम बारम्बार स्वाहा देते हो इसका क्या अभिप्राय है? प्रत्येक वेद मन्त्र के साथ में स्वाह देते हो इसकी मीमांसा क्या है? उस समय महाराजा चाकरायण ने कहा था **''समाक्रतम् व्रधे पुनुरुक्तम् ब्रह्मा स्वाहा लोका प्रधे अस्ति सुमना ग्रणाः।''** मैं जो स्वाहा देता हूँ कि मेरे हृदय में जो द ढ़ता है, नाना प्रकार की त्रुटियाँ

हैं वह प्रत्येक आहुति के साथ में स्वाह करके जैसे सामग्री अग्नि में भस्म हो जाती है इस प्रकार मैं भी इस संसार की जो ब्रह्ममयी ज्योति है उसे अपनाना चाहता हूँ स्वाहा दे करके। जो ब्रह्म रूपी अग्नि मेरे शरीर में प्रदीप्त हो रही है, जो यज्ञ रचा है वह जो ब्रह्म रूपी अग्नि मेरे हृदय में धधक रही है उस अग्नि को स्वाहा दे करके चेतनित करना चाहता हूँ। महाराजा अश्वपति ने कहा कि यथार्थ है इसको उद्गाता चुन लो। उस समय उसको उद्गाता चुन लिया गया। चुनने के पश्चात ब्रह्मा भी बनाये गये। उसके पश्चात् यह विचार आया कि अब हमें पुरोहित किसको बनाना चाहिये? महाराजा अश्वपति के जो पुरोहित थे वह महाराजा मोगद्ध ऋषि महाराज थे। वह **अक्रेति अनाव त्तम** वायु गोत्र में उत्पन्न होने वाले ऋषि थे।

इसके पश्चात जब अध्वर्यु का वाक्य आया तो अब अध्वर्यु कौन बन सकता है। उस समय कहा गया कि इस कन्या को इस यज्ञ का अध्वर्यु बनाया जाये। अब वाक्य आया कि अध्वर्यु के लिये कुछ प्रश्न होते हैं कि योग्य है अथवा नहीं। उस समय कहा गया कि हम तुम्हें अध्वर्यु बनाना चाहते हैं तुम अध्वर्यु कैसे बनोगी?

उस समय कन्या बोली कि **''ब्रह्म क ताम् मम् अस्वतम् माघ वेतो लज्जाम् भगानम् प्रभे असचतिः''** हे अश्वपति! वास्तव में मैं यह जानती तो नहीं हूँ परन्तु यह मैं अवश्य कह सकती हूँ कि पूर्व भाग में मुझे आसन दिया जाये। पूर्व भाग जो है वह मेरे लिए आसन है, मैं वास्तव में अध्वर्यु का पालन कर सकूँगी। अध्वर्यु का अभिप्राय है **उद्गम ब्रह्मे आस्वानि** मानो जो शरीर में अग्नि प्रदीप्त हो रही है उस अग्नि और सूर्य का जब समन्वय हो जाता है, दोनों का मिलान हो जाता है तो वही अध्वर्यु का कर्त्तव्य होता है।

हे प्राणम्! **प्राचम् प्रभे अस्चतम् प्रजापति न पत्नि अश्वेति कन्या ब्रह्मे ऋषि पुत्रो व त्यानम्।** अश्वपति की पत्नि ने कहा, पुत्री, मैं भी कुछ जानना चाहती हूँ। उन्होंने कहा कि प्रश्न करो। सामग्री का शाकल्य कैसा होता है? कौन से शाकल्य से तुम आहुति देना चाहती हो? तुम्हारा शाकल्य क्या है?

हे यज्ञमान पत्नि! शाकल्य २४ प्रकार का होता है। २४ प्रकार का शाकल्य दे करके यज्ञशाला में आहुति दी जाती है। पुनः प्रश्न किया कि हे

पुत्री! तुम कौन से शाकल्य से आहुति दोगी? उन्होंने कहा कि संसार में १७ शाकल्य होते हैं उनकी आहुति दी जाती है। पुनः से प्रश्न किया कि तुम कौन से शाकल्य से आहुति देना चाहती हो? उन्होंने कहा कि ११ शाकल्य होते हैं। उन्होंने फिर प्रश्न किया कि तुम कौन से शाकल्य से आहुति देना चाहती हो? उन्होंने कहा कि वास्तव मैं १० शाकल्य से आहुति दिलाना चाहती हूं। उन्होने पुनः फिर प्रश्न किया तो उन्होंने कहा कि मैं एक शाकल्य से आहुति दिलाना चाहती हूँ। कैसा सुन्दर वाक्य, कैसा उत्तम वाक्य था। उन्होंने कहा, हे देवी! तुम इनकी मीमांसा करो जिस समय तुम यज्ञशाला में आध्वर्यु बनोगी।

चौबीस की आहुति क्या है? तुम्हें प्रतीत है कि जब मानव जन्म लेता है और संसार की जानकारी होती है तो २४ प्रकार का इसको हर्ष होता है। जैसे हमारे यहाँ पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ होती हैं, पाँच कर्म इन्द्रियाँ होती हैं, पाँच प्राण होते हैं और मन बुद्धि यह सत्तरह बनते हैं परन्तु हर्ष और शोक मिला दिया जाता है और मानो **प्रभी अस्तित** मिला दिया जाता है तो इस प्रकार से यह चौबीस बन जाते हैं और सत्तरह से कैसे देना चाहती हूं पाँच प्राण, पाँच उप प्राण, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ हैं, मन और बुद्धि है। मैं इनका शाकल्य बना करके यज्ञशाला में आहुति देना चाहती हूँ। उन्होंने कहा कि देखो मेरी दस इन्द्रियाँ हैं, दसों इन्द्रियों का शाकल्य बना करके और ग्यारहवें मन का उसमें समन्वय करके आहुति देना चाहती हूँ। उस समय कहा कि तुम एक से कैसे आहुति देना चाहती हो? उन्होंने कहा कि एक से यह कि मैं संकल्प से आहुति दिलाना चाहती हूँ। संकल्प क्या होगा? वह संकल्प केवल जैसे प्रभु का यज्ञ है ऐसे ही मैं उस संकल्प से आहुति दिलाना चाहती हूँ। उस समय यज्ञमान पत्नि ने कहा कि इसको अध्वर्यु से बनाया जाये। उस समय उसे अध्वर्यु बनाया गया।

जब यज्ञ प्रारम्भ होने लगा तो यज्ञशाला में प्रविष्ट होने वाले पापड़ी ऋषि आ पहुँचे। यज्ञशाला में अश्वपति ने उन्हें आसन दिया। ऋषि जब विराजमान हो गए तो वहाँ यह संकल्प था कि व ष्टि हो जानी चाहिए। मुनिवरो देखो! संकल्प मात्र से ही जब व ष्टि का प्रारम्भ होने लगता है, यज्ञ में शाकल्य बनाये जाते हैं, बाहरिय शाकल्य और आन्तरिक शाकल्य दोनों का समन्वय हो करके ही संसार में प्रभु की चेतना और संकलनता जागरूक

हो जाती है। जागरूक हो जाने के पश्चात व ष्टि प्रारम्भ होने लगी। जब व ष्टि होने लगी तो प्रजा में एक नाद होने लगा कि ऋषि परम्परा को धन्य है जो उसके मस्तिष्क में इस प्रकार की विचार धारा आ पहुँची। जब नाद बजने लगा तो यज्ञ की पूर्ण आहुति भी होनी थी। अश्वपति के यहाँ छः मास तक यज्ञ चलता रहा। उस यज्ञ की पूर्ण आहुति का जब समय आया तो पूर्ण आहुति में विराजमान हो करके वहाँ दक्षिणा का प्रश्न आने लगा। महाराज अश्वपति की पत्नि ने कहा कि ब्रह्मा की क्या दक्षिणा होती है, उद्गाता की क्या दक्षिणा, अध्वर्यु की क्या दक्षिणा होती है और पुरोहितों की क्या दक्षिणा होती है?

मुनिवरो! जब दक्षिणा के सम्बन्ध में प्रश्न चलने लगे तो ब्रह्मा से यह प्रश्न किया गया कि ऋषिवर! मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हारी दक्षिणा क्या होगी। उस समय ऋषि ने कहा था कि जो तुम देना चाहते हो दे दो। उन्होंने कहा कि जो दक्षिणा है उसी दक्षिणा का मुझसे प्रश्न करो मैं उसे देने के लिए उद्यत रहूँगा। मैं वास्तव में उस चेतना का इच्छुक हूँ तुम उन शब्दों को उच्चारण करो और शब्द के साथ में मैं दक्षिणा प्रदान करूँ। तो मैं यह चाहता हूँ कि तुम अपने हृदय का जो संकल्प है उस संकल्प की दक्षिणा मुझे अर्पित कर दीजिए। उस समय कहा कि बहुत सुन्दर महाराज! मैं उसका संकल्प अवश्य करूँगा। मैं उसकी दक्षिणा अवश्य प्रदान करूँगा। ब्रह्मा की कोई दक्षिणा नहीं होती। ब्रह्मा की दक्षिणा ही केवल उसका संकल्प, उसकी त्रुटियाँ होती हैं। इसी प्रकार पुराहित से प्रश्न किया गया कि आप क्या दक्षिणा लेंगे। उन्होंने कहा कि मैं यह दक्षिणा लेना चाहता हूँ कि यह जो तुम्हारा जीवन है यह यज्ञमय बना रहे। मैं इस दक्षिणा को चाहता हूं। उद्गाता से कहा कि हे चाकरायण, तुम क्या दक्षिणा लेना चाहते हो जो वाक्य उच्चारण करोगे मैं वही दक्षिणा प्रदान करूंगा। उन्होंने कहा कि मैं यह चाहता हूँ कि मेरे जो उद्गम विचार हैं, मेरा जो उद्गातापन है वह तुम्हारे ग ह में सदैव बना रहे। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर भगवन! मैंने इसको प्रदान कर दिया है। उस समय कन्या पुत्री से कहा गया कि हे पुत्री, तू क्या चाहती है? उसने कहा कि मैं यह दक्षिणा चाहती हूँ कि मैंने जो यह नाना २४ से लेकर के एक संकल्प के साथ में जो शाकल्य से आहुति दिलाई है मैं इसकी दक्षिणा चाहती हूँ कि २४ प्रकार की जो प्रतिभा हैं यह दक्षिणा मुझे अर्पित कर

दीजिए। यह मेरे ग ह में, मेरे राष्ट्र में सदैव चलती रहेगी जिससे यह राष्ट्र ऋषियों का बन जायेगा। इस कामना के साथ उन्होंने कहा कि वास्तव में मैंने सब यह दक्षिणा प्रदान कर दी है।

अब प्रजापति पत्नि यज्ञशाला में एक आसन पर स्थिर हो गई और ब्रह्मा से कहा कि तुम मुझसे क्या दक्षिणा चाहते हो। उन्होंने कहा कि देवी! मैं तेरे से यह दक्षिणा चाहता हूँ कि तेरे हृदय में जो मानवीय अग्नि प्रदीप्त होती रही है वह अग्नि इस प्रकार धधकती रहे। इस अग्नि की मुझे दक्षिणा दे दीजिए कि यह अग्नि शान्त न हो पाए। उन्होंने कहा कि मैंने प्रदान कर दी। पुरोहित से कहा कि हे पुराहित देवता! तुम मेरे से क्या दक्षिणा चाहते हो? हे देवी! मैं तेरे से यह दक्षिणा चाहता हूँ कि तेरे गर्भ में जिस बालक का जन्म हो उसमें और तेरे में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए। उन्होंने कहा मैंने यह भी दक्षिणा प्रदान कर दी है। अब उद्गाता से प्रश्न किया गया कि तुम मुझसे क्या दक्षिणा पान करना चाहते हो? उन्होंने कहा कि मैं यह दक्षिणा चाहता हूँ कि राष्ट्र में तुम्हारे यहाँ जो भी पुत्रियाँ हों, कन्यायें हों वह किसी प्रकार से दुराचार में न रह करके यह जो मैंने उद्गम विचार, मैंने पुनरुक्ति तीनों से आहुति दी है, यह तुम्हारे सर्वत्र राष्ट्र में कन्याओं के समीप बनी रहे, उन्होंने कहा बहुत सुन्दर यह भी मैंने प्रदान कर दी। ऋषि कन्या से कहा कि हे देवी! तू क्या चाहती है? यों तो तू आयु में सूक्ष्म है, परन्तु माता के तुल्य तू क्या चाहती है?

'समागच्छम् ब्रह्मे व्यापनोति तम ब्रह्मणे वाचा ब्रह्मे जातनोति कामाः व घ्म् ब्रह्मे'।

हे देवी! तेरी मेरी एक जाति है। मैं तुम्हें क्या दक्षिणा प्रदान कर सकती हूँ। उन्होंने कहा कि यहाँ जाति का प्रश्न नहीं है, यहाँ यज्ञ की दक्षिणा का प्रश्न है। तो तुम क्या चाहती हो? उन्होंने कहा कि **''सम भवेतानम चतरुत लोकाः अश्वेति भागम् ब्रह्मणे आचाः''** मैं यह चाहती हूँ जातिय नाते नहीं उच्चारण कर सकती कि तुम्हारा और मेरा दोनों का समन्वय हुआ है। तुमने मुझे ऐसे सुन्दर यज्ञ का अध्वर्यु बनाया है, शाकल्य का स्वामी बनाया है, मैं यह चाहती हूँ कि मैंने जो इस प्रकार के शाकल्य को बनाया है वह तुम्हारे इस राष्ट्र में, तुम्हारे द्वारा वह जो तुम्हारी जठाग्नि में शाकल्य शुद्ध

पवित्र होता है। इसी प्रकार का शाकल्य बना रहेगा। चरित्र रूपी जो शाकल्य है वह तुम्हारा बना रहेगा तो तुम्हारे अश्वपति का राष्ट्र पवित्र होगा। मैं यह दक्षिणा चाहती हूँ। उन्होंने कहा कि हे मातेश्वरी! मैंने तुम्हें प्रदान कर दिया।

दक्षिणा का प्रश्न तो समाप्त हो गया परन्तु जब अपने–अपने ग ह को प्रस्थान करने लगे तो महाराजा अश्वपति ने अपनी पत्नि से कहा कि देवी! अब द्रव्य की प्रदानता होनी चाहिए क्योंकि दक्षिणा तो हमने प्रदान कर दी है और दक्षिणा तो हमारी पूर्ण होनी चाहिए जो हमने दी है। परन्तु अब हमें इनको कुछ देना चाहिए। क्या देना चाहिए? पालन–पोषण के लिए देना चाहिए। शारीरिक तत्वों के लिए बाहरीय दक्षिणा और देनी चाहिए। ऐसा स्मरण आ रहा है जैसे मैं यज्ञशाला में प्रविष्ट हूँ। अब जब यज्ञशाला में द्रव्य की प्रदानता होने लगी तो महाराजा चाकरायण को सहस्त्र मुद्रा अर्पित की और उन्होंने स्वीकार कर लीं।

पुरोहित जी को भी एक सहस्त्र मुद्रा प्रदान की और उन्होंने भी स्वीकार कर लीं, उसके पश्चात् जब ब्रह्मा को बाहरीय दक्षिणा देने लगे तो वह नग्न थे। स्वर्ण के रथ को मुद्राओं से परिपक्व करके वह ब्रह्मा को अर्पित कर दिया। इसके पश्चात् अब अध्वर्यु की दक्षिणा का प्रश्न था। अध्वर्यु की दक्षिणा जब देने लगे तो अध्वर्यु की दक्षिणा के लिए अश्वपति पत्नि ने प्रसन्न हो करके कहा कि महाराज जितना सुयोग्य ब्रह्मा है उतना ही सुयोग्य अध्वर्यु है। इसको स्वर्ण रथ के साथ एक सहस्त्र मुद्रा और एक सहस्त्र गऊयें प्रदान की जाएं। उन्होंने कहा कि देवी! ऐसा नहीं होना चाहिए, क्योंकि यज्ञ में गऊयें हमनें किसी को प्रदान नहीं की हैं। इसलिए हमारे लिए गऊयें देना योग्य नहीं है। उन्होंने कहा कि भगवन्! यह कन्या है, यह आयु में कितनी सूक्ष्म है और ज्ञान इसका कितना प्रबल। तुम ज्ञान से देना चाहते हो अथवा आयु से देना चाहते हो, यह मैं नहीं जान पाई। उन्होंने कहा कि देवी! हमें देना चाहिए ज्ञान से ही परन्तु ज्ञान किसी का सूक्ष्म नहीं है। यह तो हमारे सौभाग्य है, हम जितनी इनके चरणों की वन्दना कर सकें उतनी ही सूक्ष्म है परन्तु देना चाहिए। पत्नि की हठ के साथ वह रथ उसे प्रदान किया गया। जब प्रदान करने लगे तो ऋषि कन्या ने कहा कि मैं इसको स्वीकार नहीं करूँगी क्योंकि

यह मेरे योग्य ही नहीं है। मुझे एक सहस्त्र गऊयें नहीं चाहिए और न मुझे यह स्वर्ण का रथ चाहिए। मैं तो यह चाहती हूँ कि मेरा ज्ञान ऐसे ही प्रदीप्त होता रहे। उन्होंने कहा कि नहीं, तुम्हें यह स्वीकार करना होगा। मैं इसे स्वीकार नहीं करूँगी इससे मैं असंतुष्ट हो जाऊँगी और तुम्हारे यज्ञ में विघ्न आ जाएगा और यज्ञ में किसी प्रकार की बाधा नहीं होनी चाहिए। अध्वर्यु का अप्रसन्न होना ही यज्ञशाला में यज्ञ का भ्रष्ट हो जाना है जब यह वाक्य महाराजा अश्वपति के मस्तिष्क में आया तो उन्होंने कहा कि मैं यह वाक्य कैसे स्वीकार करूँ परन्तु यह वाक्य तो जो स्वीकार करने योग्य है परन्तु क्या प्रदान करें? उन्होंने कहा कि जो इच्छा। अश्वपति ने कहा कि मेरी इच्छा तो पूर्ण हो चुकी है अब तुम अपनी इच्छा प्रकट करो। तो उन्होंने कहा कि मेरी इच्छा यह है कि जितना द्रव्य आपने उद्गाता को दिया है उतना मुझे प्रदान कर दीजिए, क्योंकि मैं उसी की अधिकारी हूँ! यहाँ अधिकारी अनाधिकारी का प्रश्न आ जाता है। कन्या को एक सहस्त्र मुद्रा प्रदान की गई। रथ और मुद्रा को लेकर वहाँ से प्रस्थान किया।

अब मार्ग में चले जा रहे हैं और गुरु से प्रश्न हो रहे हैं। हे भगवन! स्वर्ण के रथ को आप क्या करोगे, आप वस्त्र भी ग्रहण नहीं करते, कोई वस्तु नहीं है, आपने ब्रह्मा पद को अपनाया है और इतने द्रव को अपना लिया है, द्रव का आप क्या कर सकेंगे,? उन्होंने कहा कि देवी! यह हमारे कार्यों में आ जाएगा। महाराज क्या कार्य करोगे? वास्तव में यह द्रव तो कोई सम्पदा नहीं है। उन्होंने कहा कि नहीं देवी! यह वास्तविक सम्पदा तो नहीं है परन्तु वास्तविक सम्पदा के साथ में यह हमारे पालन–पाषण में तो आ जायेगी। पालन पोषण भी तो एक वास्तविक सम्पदा होती है। तो भगवन! इससे पूर्व आप क्या कार्य करते थे। इससे पूर्व आपके शरीर की पालना पोषणा कैसे होती थी? उन्होंने कहा देवी! वह तो प्रायः प्रभु देता ही है। हे भगवन्! यदि हम इस द्रव्य को त्याग दें तो क्या प्रभु अब नहीं दे सकेगा। उन्होंने कहा, पुत्री! अवश्य प्रदान करेगा परन्तु यज्ञमान के यहाँ से जो हमें प्राप्त हुआ है वह हमारे पालन पाषण में आ जाना और उसका संकल्प पूरा हो जाना बहुत अनिवार्य है। तो क्या प्रभु! मैं यह स्वीकार कर सकती हूँ कि मैं इस द्रव्य को अपनाकर चलूँ? उन्होंने कहा कि नहीं पुत्री! अपनाओ या न

अपनाओ परन्तु तुम्हें यह वाक्य स्वीकार करना होगा कि महाराजा अश्वपति के यहाँ जो वस्तु हमें प्रदान हुई है वह तो बहुत ही सुन्दर है। वह उनका संकल्प है, उसी संकल्प के साथ–साथ हमारा जीवन बनेगा। उन्होंने कहा तो चलिये भगवन!

परन्तु जब प्रश्न उत्तरों के बिना न रहा गया तो मार्ग में रथ को स्थिर कर लिया और स्थिर करके यह कहा कि आप यज्ञ के ब्रह्मा बने मेरे प्रश्नों का उत्तर दो। उसके पश्चात् मार्ग में रथ आगे चलेगा। उन्होंने कहा कि पुत्री। विराजमान हो जाओ। दोनों विराजमान हो गए और यह कहा कि भगवन्! आपने मेरे से यह कहा था कि जो प्रक तिवाद है यह हमारे विनाश का कारण बन जाता है फिर आपने विनाश का कारण क्यों अपना लिया है। उन्होंने कहा कि हे देवी! यह मार्ग जो हमने अपनाया है यह विनाश का वास्तविक मार्ग नहीं है क्योंकि विनाश का मार्ग उस काल में हो जाता है जबकि हम इसमे संलग्न और इसमें सक्रिय हो जाते हैं। हम इसमें सक्रिय नहीं हैं, हमारा इसमें कोई मिलन नहीं है, हम इससे प थक भी हैं और इसमें संलग्न भी हैं। तब उन्होंने कहा, तो भगवन! आप प थक कैसे हैं? उन्होंने कहा कि पुत्री! तुम द ष्टिपात कर रही हो कि अंग कौन–सा ऐसा है जो संलग्न है किसी कार्य में। उन्होंने कहा कि यह तो नहीं है परन्तु आपके मन की भावना यह क्या कह रही है। आपने इसको अपना लिया है। मेरे विचार में तो यह आता है कि यह सब द्रव्य अश्वपति के राष्ट्र के लिए अर्पित कर दिया जाये। उन्होंने कहा कि पुत्री! ऐसा नहीं होगा क्योंकि ऐसा होना हमारे लिए असम्भव है क्योंकि यह यज्ञ की दक्षिणा है। यज्ञ की दक्षिणा को इस प्रकार प्रदान करना हमारे लिए योग्य नहीं है। उन्होंने कहा, तो भगवन! मैं तो आगे जाऊंगी नहीं। मैं तो यहीं आसन लगाऊंगी क्योंकि मैंने तो अपने प्रथम वाक्यों में कहा है कि नाना प्रकार की ऋषि कन्याओं को मैंने धिक्कारा है और मैंने भारद्वाज गोत्र को भी धिक्कारा है, मुद्गल गोत्र को भी धिक्कारा है इस सम्बन्ध में। मैं उनको अब क्या उत्तर दे सकूंगी।

उन्होंने कहा, हे पुत्री! धिक्कारने का प्रश्न नहीं है। यह तो हमारे संकल्प शक्ति का प्रश्न है। इसमें तुम्हारा विवाद नहीं होना चाहिए। उन्होंने कहा तो भगवन! अब कैसे हो? उन्होंने कहा कि चलो अपने आश्रम में चलेंगे

वहाँ जैसी भी इच्छा हो वैसा ही कर लेंगे। तुम्हारे जो विचार हैं उससे मेरा विचार कदापि भी प थक् नहीं।

कन्या ने उस रथ को लेकर प्रस्थान किया। सारथी से कहा कि रथ को अप त दिशा में ले चलो। मानो प्राचीदिग् दिशा में उस रथ का आगमन कराया। उसी दिशा में आश्रम था। जब आश्रम में प्रविष्ठ हो गये तो नाना ऋषि बालिकाएं पुत्राणी सब आये कि आज ऋषि आश्रम में यह क्या आया है क्योंकि कन्याओं ने ऐसा रथ कदापि भी द ष्टिपात नहीं किया था। जब राष्ट्र में जाने का सौभग्य ही प्राप्त नहीं हुआ तो उसको द ष्टिपात करने का सौभाग्य भी कैसे प्राप्त हो सकता था? यह सब कुछ होने के पश्चात् प्रश्न/उत्तर होने लगे कि महाराज यह क्या है? तो उत्तर देते हुए कहा कि रथ है, इसमें द्रव्य है, अश्वपति के यहाँ से प्राप्त हुआ है। उन्होंने कहा है कि बहुत सुन्दर। स्थिर हो गये। रात्रि छा गई और विश्राम मुद्रा में चले गये।

अर्द्ध रात्री का जब भाग आया तो मूल नक्षत्र प्रतिभा आ रही थी! पुत्री ने पुनः प्रश्न किया कि महाराज! द्रव्य का क्या करोगे। इस द्रव्य को प्रदान कर दो। यह द्रव्य हमें नहीं चाहिए। यह हम ब्रह्म–वेत्ताओं के लिए कलंक है। इस जीवन को कलंकित बनाना आपका हमारा कर्त्तव्य नहीं है। उस समय पुत्री से कहा कि तुम मेरे आसन से चली जाओ। जहाँ से तुम आई थीं वहीं चली जाओ अन्यथा तुम्हारा मस्तिष्क फट जाएगा? उन्होने कहा कि भगवन्! मेरा मस्तिष्क फट जायेगा? कैसे फटेगा? तुम इस विषय में अति प्रश्न करने लगी हो। अति प्रश्न करना ही तुम्हारे मस्तिष्क के दो भाग हो जाना है। कन्या शान्त हो गई।

वह रात्रि समाप्त हो गई। रात्रि में फिर कोई प्रश्न/उत्तर नहीं चला। दिवस आया परन्तु दिवस में भी कोई प्रश्न उत्तर नहीं चला क्योंकि शिष्य के लिए भयभीत हो जाना स्वाभाविक हो जाता है। पुनः जब रात्रि आई तो गुरु ने कहा कि हे पुत्री! तुम्हारी इच्छा क्या है? उन्होंने कहा कि भगवन! मेरी इच्छा है कि ब्रह्म वेत्ताओं के लिए कलंकित नहीं होना चाहिए। ब्रह्मबेत्त के लिए दो कलंक होते हैं–एक द्रव्य कलंक होता है और एक भोग। नाना प्रकार की जो विक तियाँ हैं एक वह उसके लिए चरित्रिय महाकलंक है इसके

पश्चात जो लोकेषणा है वह भी उसके लिए कलंक है। द्रव्य के तीन कलंक अपनाने से आप कलंकित होते हैं इसलिए हमें नहीं अपनाना चाहिए। तो अब करना क्या चाहिए? इस द्रव्य को महाराजा अश्वपति को दीजिए अन्यथा इसको ऋषियों में प्रदान कर दीजिए। ऋषियों में प्रदान नहीं करते तो जो भिक्षुओं के अङ्ग हैं उन्हें प्रदान कर दो। भिक्षुओं को भी नहीं देना चाहते तो नदियों में अर्पित कर दो, नाना प्रकार के प्राणी इस स्वर्ण को पान कर जायेंगे। जब यह कहा गया तो ऋषि का हृदय दहलता था क्योंकि ऋषि यज्ञ के ब्रह्मा बने थे और ब्रह्मा को दक्षिणा प्रिय होती है। उस समय कहा, पुत्री! तुम्हें जो यह एक सहस्त्र द्रव्य प्राप्त हुआ है क्या तुम इसको अर्पित कर सकोगी। उन्होंने कहा कि प्रभु! मेरे तो किसी कार्य की नहीं है क्योंकि आप भी नग्न रहते हो और मैं भी नग्न रहती हूँ। दोनो में यह प्रश्न आता ही नहीं। दोनों में विशेषता यही है कि मैं प्यारी सूक्ष्म पुत्री हूँ, दोनों की विडम्बना दोनों के साथ–साथ नहीं चल पाएगी।

मुनिवरो देखो! परिणाम यह हुआ कि वह सब द्रव्य और रथ को ले जाकर सरयू के तट पर भिक्षुओं को दान कर दिया। स्वर्ण का रथ अश्वपति को अर्पित करने चल दिये। जब वह रथ को अर्पित करने गये तो पुत्री ने कहा कि भगवन! आप जाइए। आप यज्ञ के ब्रह्मा बने हैं अश्वपति को रथ अर्पित कीजिए। उन्होंने कहा मैं रथ के साथ नहीं जाऊंगा क्योंकि मुझे लज्जा आती है। जो यज्ञ की दक्षिणा है उनको अर्पित करना हमारा कर्त्तव्य नहीं है। तो पुत्री ने कहा तो मैं जा रही हूं भगवन! उस समय कन्या रथ के साथ में चली गई। जाने के पश्चात अश्वपति से कहा कि महाराज! यह मेरे पूज्यपाद ने रथ आपको अर्पित किया है आपके ही लिए। उन्होंने कहा कि हे ऋषि कन्या! मैं इसको नहीं अपनाऊंगा। कन्या ने कहा कि और कौन इसको अपनायेगा? उन्होंने कहा कि ऋषि इसको अपनायेंगे। वही इसके ऊपर विश्राम करें, वहीं आंगन में भ्रमण करें। कन्या ने कहा कि इस पर कोई भ्रमण नहीं करेगा। इसको आप अपनायेगा अन्यथा यह आपका रथ है इसे स्वीकार कीजिए। उन्होंने कहा कि मैं तो स्वीकार नहीं करूँगा। मेरा संकल्प मेरे समीप आ जाये यह कैसे हो सकता है? यह तो यज्ञ का संकल्प है। कन्या ने कहा तो जाओ यदि संकल्प आपका यज्ञमान का है तो यहाँ अध्वर्यु का संकल्प है तुम अध्वर्यु के संकल्प से इसे स्वीकार कर लो। उन्होंने कहा

कि मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा। यदि ब्रह्मा मुझे पुनः संकल्प करें तो मैं इसे स्वीकार कर सकता हूं। तुम अध्वर्यु हो। मैंने तुम्हें एक सहस्त्र मुद्रा दी थी उन्हें तुम संकल्प कर सकती हो और उसे मैं स्वीकार कर सकता हूं परन्तु रथ के संकल्प को मैं पुनः से अपने में अपनाता चला जाऊं इसका मुझे अधिकार नहीं है।

देखो यह जटिल वाक्य पुत्री के समीप आया। उसने कहा कि मैं अभी जाती हूं और अपने पूज्य गुरुदेव को अग्रित करती हूं। इसका आपको संकल्प लेना ही होगा। उन्होंने कहा कि जाओ ब्रह्मा जी से कहो मेरे लिए यह संकल्प दे देवें। मैं इस संकल्प को अवश्य प्राप्त कर सकता हूं क्योंकि उनका संकल्प मुझे प्राप्त हो जायेगा। मेरा संकल्प उन्हें प्राप्त हो गया है। मानो जैसे ब्रह्म का संकल्प प्रक ति को प्राप्त हो गया और प्रक ति का संकल्प ब्रह्म को प्राप्त हो गया दोनों का संकल्प मिलकर वे एक संकल्प बन गया है। मैं ऐसे स्वीकार कर सकता हूं।

अब वह बहुत तीव्र गति से भ्रमण करती हुई गुरु के समीप आई और गुरु से कहा कि महाराज अब आप इस रथ को संकल्प कराइये अश्वपति को। उन्होंने कहा कि पुत्री! मैं नहीं जाऊंगा। मैंने पुनः कहा है कि मैं संकल्प नहीं कर पाऊंगा। उसने कहा कि नहीं जाओगे तो मैं अपने प्राणों की दक्षिणा अर्पित कर सकती हूं आपके लिए क्योंकि यह हमारे लिए कलंक है जो हमें अच्छा नहीं लगता। उसको अवश्य, अर्पित करना चाहिए। उन्होंने कहा कि तुम प्राणों को किसी भी काल में नहीं त्याग सकती। क्या तुम ब्रह्मवेत्ता कहलाती हो? ब्रह्मवेत्ता यह कहता है कि तुम प्राणों की आहुति कैसे दे सकती हो क्योंकि प्राण तुम्हारा नहीं है, प्राण सदैव रहने वाला है। प्राण में सर्वस्व ओत–प्रोत है। इस शरीर को त्याग करके जाओगे तभी प्राणों के साथ में चले जाओगे। क्या तुम्हें यह प्रतीत नहीं है? तुम कौन से प्राण को त्यागना चाहती हो? उस समय कहा है कि मैं उस प्राण को त्यागना चाहती हूं जिससे तुम्हें मैं दर्शन न दे सकूं। उन्होंने कहा कि **ब्रह्मे यौगिक प्रभेअस्ति।** तुमने योग की मुद्राओं को द ष्टिपात नहीं किया। योग में कोई बात असम्भव नहीं है। योग में यह आता है कि यदि तुम सूक्ष्म शरीर रहोगी वहां भी वार्ता प्रकट हो सकती है यदि तुम कारण लिंग में चली जाओ तो मुक्ति को प्राप्त

हो करके कारण लिंग में हम वार्ता प्रकट कर सकते हैं। तुम कहां जाओगी, प्रभु के क्षेत्र से कोई मानव प थक् नहीं है।

जब यह वाक्य आया तो कन्या थी और शिष्य थी निरूत्तर हो गई। जब कोई उत्तर न बन सका तो अन्त में यह कहा कि आप संकल्प कराइये। उन्होंने कहा कि मैं तुम्हारे कथानानुसार संकल्प करा सकता हूँ परन्तु जहाँ तक प्राणों के त्यागने का प्रश्न है यह आगे से किसी के आगे उच्चारण नहीं होना चाहिए क्योंकि यह म त्यु है। हताश होना ही संसार में म त्यु है तुमने यह निराशा कैसे स्वीकार कर ली कि मेरे पूज्य गुरुदेव! मेरे कथनानुसार कार्य नहीं करेंगे। मैं अवश्य कर सकूँगा जो मेरे और तुम्हारे दोनों के लाभ का है और जहाँ प्रतिष्ठा का प्रश्न आता है वहाँ त्याग करना चाहिए क्योंकि त्याग संसार में जीवन है। पुत्री! चलो। दोनों ने प्रस्थान कर दिया। अश्वपति के यहाँ पहुँचे। महाराज अश्वपति ने अपने आसन को त्याग दिया और ऋषि को आसन दिया। राज सिंहासन पर विराजमान करा करके पति–पत्नि दोनों ने उनके चरणों को स्पर्श किया। उन्होंने कहा अश्वपति! मैं इस रथ का संकल्प करना चाहता हूं। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर मैं आपसे संकल्प स्वीकार करूंगा क्योंकि पूजनीय ऋषियों से ही अपना संकल्प स्वीकार नहीं करूंगा तो और कौन कर सकेगा। मेरे तो यह बड़े पुण्य हैं वहाँ वह संकल्प अर्पित कर दिया और अपने आश्रम में प्रविष्ट हो गये।

तो वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि संसार में मानवता क्या है, देववत क्या है? इन कार्यों के करने के लिए जब मानव को इतनी अति ज्ञानता हो जाती है, प्रभु का यह ज्ञान हो जाता है कि प्रभु ही संकल्प है, जब संकल्प और सभी प्रभु में प्रवीण हो जाता है तो उस समय न तो मानव में दुराचारता रहती है, न किसी कन्या के हनन की प्रव ति आती है मानो वह संसार में व्यापकता को प्राप्त हो करके ब्रह्मवेत्ता की शरण में जा करके उसी में अपने को परिणित कर लेता है।

दिनाँक : 1 नवम्बर, 1969
समय : प्रातः 6:00 बजे
स्थान : श्री जगमोहन जी, बरनावा

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. जितने वेद मन्त्र 'ओ३म्' की व्याहृतियों से बद्ध हैं उन सब ही नाम गायत्री है।
2. हमारे यहाँ प्रत्येक वेद मन्त्र को गायत्री कहा जाता है क्योंकि प्रत्येक वेद मन्त्र में ज्ञान विज्ञान ओत-प्रोत होता है।
3. आज हमारे द्वारा ऋषि का बहुत बड़ा ऋण है। आज हमें ऋषियों की आज्ञा को मानना चाहिए।
4. विष्णु नाम आत्मा का है विष्णु नाम राजा का भी है विष्णु नाम सूर्य का भी है।
5. ज्ञान रूपी आनन्द का नाम अक्षय क्षीर सागर है।
6. काम, क्रोध, मद, लोभ और मोहरूपी यह शेषनाग है।
7. नारद नाम मन का है।
8. गन्धर्व नाम बुद्धि का है।
9. नाभि नाम तरङ्गों का, कमल नाम तरङ्गों का है।
10. ज्ञान के क्षेत्र में रमण जो करता है वह संसार से पार हो जाता है।
11. पदम् नाम सदाचार और शिष्टाचार का है।
12. जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार और शिष्टाचार होता है उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है।
13. गदा नाम क्षत्रियों का है।
14. चक्र नाम संस्कृति का है।
15. संस्कृति वह अमूल्य वाणी है जो मानव को सदाचार और शिष्टाचार देने वाली है।
16. शङ्ख नाम वेद ध्वनि का है, ज्ञान का है।
17. जिस राजा के भुज में यह चार चिन्ह होते हैं। वह राष्ट्र पवित्र कहलाता है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

आयुष्मति अवन्ती

परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभाशिर्वाद से श्रीमति राजकुमारी त्यागी धर्मपत्नी श्री यतेन्द्र त्यागी निवासी ग्राम चिरथावल जिला मुजफ्फरनगर, उ.प्र. ने अपनी पौत्री आयुष्मति अवन्ती के द्वितीय जन्मदिन के शुभागमन पर वैदिकता से सम्पन्न परिवार ने 1100 रु. का सात्विक सहयोग समिति के प्रकाशन कार्य को बल प्रदान करने के लिए अर्पित किया है जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

कन्या की माता श्रीमति ऋचा त्यागी एवम् पिता डॉ. आलोक त्यागी जी निवासी राजनगर एक्सटेंशन द्वारा वैदिक परम्परा की सम्पन्नता का निर्वाह परिवार पूर्वजों की शिक्षा के रूप में निरन्तर चला आ रहा है और उसको और अधिक पवित्रता से सम्पन्न करने का सौभाग्य माता श्रीमति ऋचा त्यागी को अपने बाबा श्री कालूराम त्यागी जी व माता-पिता श्रीमति रश्मि त्यागी एवम् गुरुवचन शास्त्री जी की छत्रछाया में धरोहर के रूप में बाल्यकाल से प्राप्त होता रहा है। विदुषी माताएँ ही श्रेष्ठ सन्तान को राष्ट्र को अर्पित करने में पुरातनकाल से अग्रगणीय रही हैं।

सौभाग्यशाली शिशु को जन्मदिन की शुभकामनाएँ देते हुए समस्त परिवार की सुख, शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए समिति ईश्वर से कामना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

।। ओ३म् ।।

जन्मदिवस की शुभकामनाएँ

आयुष्मति यजुन्षी

परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभाशिर्वाद से श्रीमति कमलेश त्यागी निवासी मुजफ्फरनगर उत्तर प्रदेश ने अपनी सुपौत्री आयुष्मति यजुन्षी सुपुत्री श्रीमति प्रेरणा त्यागी व रचित त्यागी के जन्मदिवस की पावन वेला के शुभागमन पर 500 रु. का सात्विक अनुदान पत्रिका के प्रकाशन के लिए अत्यन्त उदारता से अर्पित किया है। जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

श्रीमति कमलेश त्यागी बाल्यकाल से ही वैदिक सम्पदा के संस्कार अपने माता-पिता के गृह से ग्रहण करती चली आ रही हैं और गृहस्थ में प्रवेश करने के पश्चात् भी उसी परम्परा को जीवन में अपनाते हुए अपने जीवन को बहुत ही साधारण व सात्विक भाव से अपने सुपुत्र श्री रचित त्यागी के परिवार के साथ आनन्द से व्यतीत करते हुए अपने परिवार को भी उसी ज्ञान से ओतप्रोत करने में संलग्न रहती हैं। उन्हीं परम्पराओं का सम्मान करते हुए अपने सुपुत्र को भी उसी राह में आचरण की राह दिखाते हुए ऋषि-मुनियों के शुभाशिर्वाद के लिए इस वैदिक ज्ञान की गङ्गा को गति प्रदान करने के लिए अपना संकल्प अर्पित किया है। जीवन की विषम परिस्थितियों में भी अपने जीवन को बड़ी निष्ठा और श्रद्धा से आगे बढ़ाते हुए उसी ज्ञान को अपनी सुपौत्रियों को भी शिक्षित करने में अपने तन-मन-धन से प्रयत्नशील हैं।

समिति आयुष्मती यजुन्षी के जन्मदिवस की बारम्बार शुभकामना प्रकट करते हुए समस्त परिवार के लिए सुख-शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमापिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 10 मार्च, 2019 से 17 मार्च, 2019 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

मासिक सहयोग का आह्वान

सभी श्रद्धालु एवम् उदार दानदाताओं के सहयोग से समिति के प्रकाशन का कार्य निरन्तर उर्ध्वा गति को प्राप्त हो रहा है उसी सहयोग की गरिमा को सुदृढ़ रूप से चिरस्थायी बनाए रखने के लिए आपका अनुदान निरन्तर प्राप्त होता रहे ऐसी आप सभी से समिति विनम्र भाव से प्रार्थना करती है और नए मासिक सहयोगियों को भी अपनी आहुति इस जनकल्याण के कार्य में प्रदान करने की अपेक्षा करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) **PAN No. – AAAAV7866J**

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

website : www.shringirishi.in

Email : contact@shringirishi.in

सदस्यता

पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की ज्ञान गङ्गा का मासिक पत्रिका ''यौगिक प्रवचन'' में, वैदिक अनुसन्धान समिति द्वारा प्रकाशन किया जाता है और जिस के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क दिनाँक 1 जनवरी 2019 से 1500 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 150 रु. होगा, जिसको आप समिति के पते के साथ-साथ निम्न किसी एक पते पर भी डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   ए-59, पञ्चशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294
3. श्री जितेन्द्र चौधरी, प्रचार मन्त्री
   ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मोबाइल : 9811707343

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	110.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	110.00
*3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	120.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	110.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	110.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	100.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	30.00
8.	आत्म-लोक	45.00
*9.	धर्म का मर्म	50.00
10.	शंका-निवारण	40.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व	50.00
12.	आत्मा व योग-साधना	40.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	150.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	150.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	140.00
17.	रामायण के रहस्य	45.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	50.00
19.	महाभारत के रहस्य	35.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	45.00
21.	रावण-इतिहास	65.00
22.	महाराजा-रघु का याग	35.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	40.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	40.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	45.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	40.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	45.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	50.00
29.	याग-मन्जूषा	45.00
30.	आत्म-दर्शन	35.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	40.00
32.	याग और तपस्या	70.00
33.	यागमयी-साधना	45.00
34.	यागमयी-सृष्टि	40.00
35.	याग-चयन	50.00
36.	दिव्य-रामकथा	150.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	50.00
38.	दिव्य-ज्ञान	45.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	140.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	45.00
41.	आत्म-उत्थान	45.00
*42.	तप का महत्त्व	45.00
43.	अध्यात्मवाद	45.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	45.00
45.	वैदिक-प्रभा	40.00
46.	प्रकाश की ओर	40.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	45.00
48.	वैदिक-विज्ञान	40.00
49.	धर्म से जीवन	40.00
50.	आत्मा का भोजन	45.00
51.	साधना	40.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	45.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	45.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	110.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	110.00
57.	माता मदालसा	60.00
*58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	110.00
*59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	110.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	110.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	110.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	110.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	110.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	60.00
65.	प्रभु-दर्शन	60.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	110.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	60.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	110.00
*69.	ब्रह्म की ओर	60.00
*70.	ईश्वर मिलन	60.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	110.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	110.00
*73.	नैतिक शिक्षा	60.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	110.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, ए-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4202763
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री शमीक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)।
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. श्री पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्री प्रदीप त्यागी सुपुत्र श्री महेश त्यागी, रघुनिवास 138 सर्वोदय कालोनी, मेरठ रोड़, हापुड़ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9758330473
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री ज्ञानेश द्विवेदी	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
श्री कर्ण तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली	101 रुपये
श्रीमती रुचिका तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली	101 रुपये
श्री अरुण तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली	101 रुपये
श्रीमती सुखमणी तुली, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली	101 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
श्री संजय उर्फ टीटू सुपुत्र श्री सोमदत्त त्यागी, तलहटा	100 रुपये

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से प्राप्त नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ-साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मन्त्री
   ए-59, पञ्चशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   के-3, लाजपत नगर-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आज का हमारा वेद का पाठ, यह उच्चारण करता चला जा रहा था। हमारे यहाँ उस परमपिता परमात्मा की महिमा का जहाँ गुणगान गाया जाता है, तो वास्तव में जब उसको तत्त्व-तत्त्व से विचारने लगते हैं तो हमें यह प्रतीत होने लगता है कि यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड वसुन्धरा का स्वरूप माना गया है। क्योंकि वसुन्धरा महामना प्रभु को भी कहते हैं, जिसके गर्भस्थल से यह सर्वत्र जगत विराजमान हो रहा है, जिसकी प्रक्रियाओं से यह पृथ्वी क्रियामान हो रही है, सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसी के आश्रित भ्रमण कर रहा है। आज हम उस परमपिता परमात्मा को भी वसुन्धरा के रूपों में परणित किया करते हैं और उसका गुणगान गाते हैं गुणों का अनुवाद करते हुए कहा करते हैं कि वह जो प्रभु है जो संसार का रचयिता है, जो क्रियात्मक क्रिया में ला रहा है परन्तु वही जगत में व्याप रहा है उसी की महान ज्योति से हम सर्वत्र ब्रह्माण्ड में, सर्वत्र प्राणी, प्राणी मात्र उसी की ज्योति से व्याप रहा है, उसी के आँगन में रमण कर रहा है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 47 : अंक : 556
जनवरी 2019

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-01-2019
Published on 5th day of the same month